शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2320 – 0871
17 अक्टूबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

प्रसाद के काव्य में नारी चित्रण: कामायनी के विशेष सन्दर्भ में

चन्द्रकान्त तिवारी
(यूजीसी नेट)
एम.बी.जी.पीजी. कॉलेज, हल्द्वानी
कुमाऊँ विश्वविद्यालय
नैनीताल, भारत

शोध संक्षेप

कामायनी छायावाद की चरम परिणति है और जयशंकर प्रसाद के गंभीर चिंतना का श्रेष्ठतम प्रतिफल भी है। पन्द्रह सर्गों में विभक्त यह काव्य श्रद्धा और मनु के माध्यम से सृष्टि के विकास की कथा को तो प्रस्तुत करता ही है श्लिष्ट रूपक-विधान के सहारे मानवता के चरम विकास को भी मनोवैज्ञानिक और आध्यात्मिक भूमिका पर प्रस्तुत करता है। बीसवीं शताब्दी की महनीय उपलब्धि के रूप में कामायनी दार्शनिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक और कलात्मक वैशिष्ट्य का समीकृत रूप लेकर आई है। 'चिन्ता' से 'आनन्द' की चरम परिणति तक की यात्रा करता हुआ यह काव्य हिमगिरि की एक चेतनता से समरस होने वाले मनु के जीवन का इतिहास है। मानवीय चेतना के अन्नमय कोष से आनंदमय शिखर तक पहुँचने की यात्रा का वृत्तान्त है। इसके प्रमुख पात्र मनु, श्रद्धा और इड़ा हैं, जो इच्छा, क्रिया और ज्ञान के प्रतिनिधि हैं।

कामायनी में नारी सौंदर्य

श्रद्धा कामायनी जगत की मंगल कामना अकेली और विश्वचेतना व पूर्णकाम की प्रतिमा है। इड़ा बुद्धि की प्रतीक है। किंतु अपने सौंदर्य से 'नयन महोत्सव' की प्रतीक भी है। इतने पर भी यह सच है कि उसका व्यक्तित्व बौद्धिक बना रहा है। श्रद्धा भारतीय संस्कृति की जीवंत प्रतिमा है तो इड़ा आधुनिक पाश्चात्य सभ्यता और यांत्रिक युग की मनोवृत्तियों के साथ जुड़ी प्रतीत होती है। 'कामायनी' जीवन की प्रमुख समस्या का समाधान भी है और आनंदवाद की प्रतिष्ठा भी है। आज जीवन जैसा है, उसमें न कहीं चैन है और न सुख शांति ही है। यही कारण है कि 'कामायनी' के सहारे सतत् संघर्षशील और चिर अशांत जीवन को समरस और आनंदमय बनाने की प्रवृत्ति को निरूपित किया गया है। 'चिन्ता सर्ग' मानव की संघर्षशील और व्यथित स्थिति का निरूपक है और आनंद सर्ग समरस और आनंदमय स्थिति का।

चूँकि नारी सौंदर्य का प्रतीक है। इसमें अवयव की सुंदर कोमलता है और छायापथ में तारक द्युति सी झिलमिल करने की मधुमयता है। काव्य में नारी के चित्रण के साथ ही उसका सौंदर्य चित्रण शाश्वत है। आज के साहित्य में सौंदर्य, सौंदर्य के लिए प्रतिष्ठित है। सौंदर्य और आनंद का घनिष्टतम संबंध है। वास्तविक सौंदर्य का दर्शन हममें अनिवार्यतः आनंद भावना का संचार करता है। आनंद की यह विलक्षण भावना सामान्य उपयोगिता से पृथक असाधारण आह्लादमयी अनुभूति है। इसके प्रभाव अवचेतन में बडे धुंधले व अस्पष्ट रूप में होते हैं। अतः यह भावना अनिवर्चनीय है।

सौंदर्यमयी नारी को कृत्रिम आवरण की कोई आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि उस पर सभी कुछ शोभा देने लगता है। छायावादी युग में पूर्ववर्ती युगों की सौंदर्य-दृष्टि की प्रतिक्रियास्वरूप एक नवीन सौंदर्य दृष्टि का उन्मेष हुआ। नारी के सहज सौंदर्य को जितनी ललक व उत्साह के साथ छायावादी काव्य में स्वीकार किया गया वह सुविदित है। व्यापक स्वच्छंदता की नवीन वृत्ति ने उन्मुक्त भाव से नारी के नैसर्गिक सौंदर्य की अबाध चर्वणा करने की प्रेरणा प्रदान की। नारी-सौंदर्य के शारीरिक, मानसिक, छवि, स्वभाव तथा आत्मिक स्थलों के प्रति इस प्रकार की उत्कंठाओं पूर्ण जिज्ञासा हिंदी कविता में पहली बार परिलक्षित हुई।

जिस प्रकृति का गुणगान आरंभ में छायावादी कवियों ने किया जो प्रकृति आरंभ में नारी-विरोधी प्रतीत होती थी, वही नारी की आवश्यकता अनुभव करने वाली तथा कारण बन गई। इस पर यह भी कहा जा सकता है कि द्विवेदी-युगीन आर्यसमाजी नैतिकता की प्रतिक्रिया का पहला सोपान प्रकृति-प्रेम था, जिसने नारी-प्रेम के लिए पृष्ठभूमि तैयार की। साहित्य में प्रेम का ही अनिवार्य परिणाम तथा उसका आवश्यक अंग है। इसके फलस्वरूप पहली बार छायावादी कविता में नारी को प्रेयसी का ऊँचा आसन प्राप्त हुआ। प्रेयसी, प्रिये, प्रियतमें और सखि, सजनी जैसे संबोधन जिस मात्रा में छायावादी कविता में व्यक्त किए गए पहले शायद ही किए गए हों। प्रेयसी का आधार बिंदु प्रेम शब्द सागर में निहीत है। छायावाद के कीर्ति स्तंभ कवि प्रसाद की कविता में प्रेम की जो प्रधानता मिली वह अपूर्व है, यहाँ तक कि छायावाद को सामान्यतः प्रेम-काव्य समझा जाता है। जहाँ एक ओर द्विवेदी-युग में सुधारवादी नैतिकता का इतना आतंक था कि प्रेम की कविता लिखते हुए कवि जन संकोच करते थे, क्योंकि उन्हें रीतिकालीन कहे जाने का डर था। वस्तुतः द्विवेदी युग में भी नारी के प्रति पुरुष का दृष्टिकोण बहुत कुछ वही था, जो रीतिकाल में था। दोनों युगों के दृष्टिकोणों में मौलिक अंतर नहीं था। अंतर इतना ही था कि रीतिकालीन कवि जिन बातों को निधड़क कह देता था, द्विवेदी-युग का कवि उन्हें मन ही मन दबा लेता था। वहीं दूसरी ओर छायावाद युग आते-आते नवीन प्रतिक्रिया काफी पुष्ट हो गई और पुरानी रूढ़ियाँ जर्जर हो चली, इसलिए स्त्री पुरुष के संबंधों में नवीन नैतिकता की प्रतिष्ठा हो गई। द्विवेदी-युग में प्राचीनता और नवीनता का संघर्ष आरंभ ही हुआ था, जबकि छायावाद युग में इस संघर्ष की नवीन शक्ति काफी प्रबल हो गई। द्विवेदी युग में इच्छा और क्रिया, विवेक और संस्कार के बीच जो असंगति थी वह छायावाद युग में बहुत संतुलित हो गई। “आधुनिक विज्ञान ने पुरुष को रूढि-विद्रोह और आत्म-विकास के लिए प्रेरित किया, उसी तरह नारी को भी, परंतु इस पुरुष-प्रधान समाज में नारी के लिए संभव नहीं है कि खुले शब्दों में रूढ़ियों को चुनौती दे सके। नारी तो पुरुष से भी अधिक वंदिनी है। उसकी दुनिया तो और भी छोटी है। वह अपने घर की खिड़की से विस्मय के साथ संसार की गतिविधि देखती है। उसके विस्मय के सामने जो कुछ आता है, उसे देख लेती है लेकिन उसकी समझ में कुछ भी नहीं आता कि लोग जो आ जा रहे हैं, वह न जाने कहाँ से आ रहे हैं और न जाने कहाँ जा रहे हैं।”1

निस्संदेह कामायनी आधुनिक युग की श्रेष्ठ कृति है। यह छायावादी युग की चरम उपलब्धि है और प्रसाद जी की काव्य कला का उत्कृष्ट प्रमाण है। इस कृति में मानवता की चिरंतन पुकार को

शब्द-ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 अक्टूबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ़्रीड रिसर्च जर्नल

अभिव्यक्त किया गया है। यह पुकार उन लोगों का मार्गदर्शन कर रही है जो निराश, भयग्रस्त, भ्रमित और विविध विसंगतियों के साथ जीवन बिता रहे हैं। इतना ही नहीं, 'कामायनी' के माध्यम से कवि प्रसाद ने विजयिनी मानवता हो जाए का अमर संदेश भी प्रसारित किया है और आनंद अखण्ड घना था को चरम सोपानों पर ले जाकर मानव को सुख और शांति का मंगल मय संदेश भी दिया है। छायावादी युग की यह एक अकेली ऐसी रचना हैं जिसमें संपूर्ण काव्यधारा का सारतत्व और निचोड़ समाहित हुआ है। छायावाद में वैयक्तिकता, कल्पनाशीलता का स्वर साफ सुना जा सकता है। ये दोनों स्वर 'कामायनी' में भी बखूबी सुने जा सकते हैं। 'कामायनी' के आशा सर्ग, श्रद्धा सर्ग और लज्जा सर्ग में कल्पना का वैभव कितने ही रंगों में सज-सँवरकर सामने आया है। वैयक्तिकता की जो भावना आधुनिक युग में घर करती जा रही है, उसी के प्रतीक बनकर मनु भी 'कामायनी' के प्रारंभिक अंश में हमारे सामने आते हैं। वे असफल, निराश, हताश कितने ही हों, किन्तु वैयक्तिकता की सीमा में कैद हैं। एक प्रकार से वे आत्मकेंद्रित हैं। प्रसाद जी ने जिस वेदना को अपनाया, जिस अवसाद और निराशा को काव्य का उपजीव्य बनाया वह भी 'कामायनी' मे देखा जा सकता है। 'कामायनी' में जो निराशा, अवसाद और वेदना के भाव हैं वे मनु की वेदना तक ही सीमित नहीं हैं वे तो प्रसाद जी की वेदना से भी जुड़े हुए है। अतीत के प्रति आसक्ति का भाव मनु को कुछ समय के लिए निष्क्रिय और अकर्मण्य बनाता है। जैसे ही श्रद्धा उनके संपर्क मे आती है। वैसे ही वे प्रवृत्ति मार्गी हो जाते हैं। मनु का अतीत चिंतन है ही इसलिए कि वे उस केंद्रिभूत सुख, शक्ति और वैभव का स्मरण करते हुए भावी सृष्टि के विकास में अपना योगदान दे सकें। ऐसी स्थिति में इस प्रवृत्ति को दोषपूर्ण बताना और प्रसाद जी को पलायनवादी घोषित करना न केवल अनौचित्यपूर्ण है, अपितु 'कामायनी' के मूल संदेश से विरहित हो जाना भी है तो प्रसाद के इस स्थूल संदेश से भी विरहित हो जाना है। प्रसाद ने इस स्थूल सौंदर्य चित्रण के स्थान पर सूक्ष्म भावोपम अलौकिक सौंदर्य को अपने काव्य में स्थान दिया। 'कामायनी' में आया श्रद्धा का सौंदर्य वर्णन उसके अतींद्रिय सौंदर्य को प्रस्तुत करता है। इस सौंदर्य चित्रण में पात्र के बाहय और मांसल सौंदर्य को उतना स्थान प्राप्त नहीं है। जितना कि उसकी अंतवृत्तियों के उद्घाटन को प्राप्त है। यही कारण है कि 'कामायनी' में वासनाव्यंजक विशेषणों के स्थान पर निष्कलुष और अनाघ्रात सौंदर्य को अधिक स्थान दिया गया है। छायावाद के अंतर्गत जिस सौंदर्य का चित्रण किया गया है उसमें कहीं-कहीं छायावादियों के हृदय कि भावना अथवा पुकार भी अभिव्यक्त हुई है। ऐसे स्थलों पर लगता है कि छायावादी कविता का सौंदर्य अतृप्त अभिलाषाओं के रंगीन धुएं का सौंदर्य है। जब मनु श्रद्धा की हथेली अपने हाथों में ले लेते हैं तो उसका वर्णन प्रसाद ने पूरी छायावादी सौंदर्य भावना के अनुकूल ही किया है। कहने का तात्पर्य यह है कि छायावादी काव्य का चरम बिंदु 'कामायनी' जिसमें नारी सौंदर्य का चित्रण अलौकिक स्वरूप से ही अधिक अभिव्यक्त हुआ है, किंतु कहीं-कहीं इस सौंदर्य में भौतिक स्पर्श भी दिखाई देता है जो इस बात का प्रमाण है कि प्रसाद न तो कोरी भौतिकता के पक्षधर थे और न केवल अलौकिकता के ही। बल्कि उनकी नारी तो साकार है। केवल कल्पना मात्र नहीं।

'कामायनी' में नारी के प्रति अर्चना और आराधना का भाव भी देखने को मिलता है। कवि प्रसाद ने नारी को पवित्र, पावन और गरिमामयी दृष्टि से देखा है। कवि प्रसाद जी ने नारी तुम केवल श्रद्धा हो कहकर और प्रकृति के सुकुमार कवि पंत जी ने तुम्हारी वाणी में कल्याणी, त्रिवणी की लहरों का गान और स्वयं महाप्राण निराला जी ने वह इष्टदेव के मंदिर की पूजा सी कहकर इसी पवित्रतावादी दृष्टि को प्रस्तुत किया है। छायावाद का यह पवित्र और निष्कलुष दृष्टिकोण 'कामायनी' में सर्वत्र व्याप्त है। प्रसाद जी ने स्पर्श के आकर्षण से पूर्ण प्रकट करती ज्यों जड़ में स्फूर्ति कहकर इसी भाव को व्यक्त किया है। रामधारी सिंह दिनकर ने ठीक ही लिखा है कि "कामायनी के कवि के मन में तो नारी की जो निष्कलुष प्रतिमा अवस्थित थी उसकी पवित्रता नारी रूप-चित्रण की शैली में भी झलक मारती है। अपने वर्णन में कवि ने वासना-व्यजंक विशेषणों का सर्वथा त्याग करके केवल ऐसे विशेषण रखे हैं जिससे स्वतः निष्कलुषता का वातावरण स्पर्श से प्रस्तुत हो जाता है। इस वातावरण में श्रद्धा का जो रूप प्रकट होता है, वह सचमुच से दूर और मन में अनिर्वचनीय स्फुरण उत्पन्न करने वाला है।"2

'कामायनी' की प्रमुख पात्र श्रद्धा मनु के जीवन में प्रेरक शक्ति के रूप में उपस्थित होती है। और उसे कर्म की प्रेरणा देती है। वह यह भी समझाती है कि यह जीवन सत्य है और निरंतर कर्म करते रहने से ही जीवन को सम्यक रूप से जिया जा सकता है। एक प्रकार से मनु के निराशा से भरे जीवन में आशा का संचार करती हुई श्रद्धा उन्हें जीवन की ओर प्रेरित करती है। यह स्पष्ट कह देती है कि 'तय नहीं केवल जीवन सत्य करूण यह क्षणिक दीन अवसाद।' श्रद्धा मनु को जीवन की ओर प्रवृत्त करती हुई, कर्म की प्रेरिका बनती हुई उन्हें निराशा के अंधकार से निकालने का प्रयत्न करती है। यह श्रद्धा रूप में नारी का सच्चा एवं आदर्श गुण है। वह इसमें सफल भी होती है, और मनु जीवन की ओर प्रवृत्त होते हैं, किंतु जीवन की ओर प्रवृत्त होकर वे भोग-विलास करने, आसुरी और पाशविक वृत्तियों के शिकार बनकर जीवन जीने को ही सब कुछ मान लेते हैं। नारी ही पुरुष जीवन में उज्जवल आलोक पैदा करती हुई उसकी सुप्त पड़ी चेतना को जगाती है। जब मनु घायल हो गये तब उनकी सोयी हुई चेतना जागी और उन्हें अहसास हुआ कि श्रद्धा सही थी। आज उसके बिना मेरा जीवन व्यर्थ हो गया है। ऐसी सोच मनु के मन में इड़ा सर्ग में भी जन्मी थी जब काम की शाप ध्वनि सुनकर वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि 'सचमुच मैं हूँ श्रद्धाविहीन'। आज का व्यक्ति भी श्रद्धा से रहित है। उसके मन में आस्था की कोई किरण नहीं दिखाई दे रही है। एक नारी ही सुषुप्त व निष्क्रिय पडे मनुष्य को उसके कर्म पथ पर अग्रसर करा सकती है। श्रद्धा भी मनु को मानव जीवन के त्रिकोण से परिचित कराती है। यह त्रिकोण, इच्छा, क्रिया और ज्ञान का है। वह यह संकेत देती है। कि इच्छालोक अथवा भावलोक के प्राणी तो केवल भावलोक की दुनिया में रहते हैं, अतः उन्हें जीवन की वास्तविकताओं का ज्ञान ही नहीं होता है। वे तो शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध में मानसिक दृष्टि से लीन होकर सदैव तृप्ति का अनुभव करते रहते हैं। यह इच्छालोक मानव की रजोगुणमयी प्रवृत्ति का परिचायक है और इस प्रवृत्ति के कारण ही मनुष्य ललित कलाओं में अधिक लीन रहकर भावजगत के आनंद में ही मद मस्त बना रहता है।

'कामायनी' में यह भी संकेतित है कि विषमता का विष मनुष्य के मन में ही व्याप्त नहीं है, वह पारिवारिक जीवन में भी घर करता जा रहा है। आज स्थिति यह हो गयी है कि जो दांपत्य संबंध स्नेह, विश्वास और समर्पण की नींव पर खडे होकर आनंद का मार्ग दिखाते थे, वे ही आज आशंका, अविश्वास, पारस्परिक मतभेद और समन्वय के अभाव में कटु से कटुतम होते जा रहे हैं। ध्यान से देखें तो आज का मनुष्य मनु की भाँति विलासी दंभी और नारी को अपने आधीन मानकर जीने का अभ्यस्त होता जा रहा है। नारी-जागृति की कितनी ही बातें क्यों न की जा रही हों और नारी भी कितनी ही जागरूक होने की चेष्टा क्यों न कर रही हो, फिर भी हमारा आधुनिक पारिवारिक जीवन मनु और श्रद्धा की ही भाँति अशांति से भरा हुआ है। मनु की विकृति यह थी कि वे श्रद्धा के शरीर पर ही नहीं, मन पर भी पूरा अधिकार चाहते थे और आधुनिक मनुष्य की विकृति यह है कि वह केवल शरीर का रिश्ता ही रखना चाहता हैं। मनु पंचभूत की रचना में अकेले रमण करना चाहते थे और श्रद्धा समर्पण की प्रतिमा बनी हुई उनके साथ रहना चाहती थी, किंतु मनु को यह गवारा नहीं हुआ। यही स्थिति आज भी है। आज भी पति अथवा पुरुष समाज अपनी पत्नी को पुरुषत्व के मोह में कुछ भी महत्व देने को तैयार नहीं है। उसकी दृष्टि में नारी की कोई सत्ता नहीं है। प्रसाद ने जब यह सोचा होगा तब से अब तक तो स्थिति और भी बदतर हो गई है। प्रसाद इस बात को समझ गये थे इसलिए उन्होनें 'कामायनी' के इड़ा सर्ग में पारिवारिक समरसता की बात करते हुए काम की शाप ध्वनि के माध्यम से यह कहा है-

"तुम भूल गये पुरुषत्व मोह में कुछ सत्ता है नारी की
समरसता है संबंध बनी अधिकार और अधिकारी की।"3

पारिवारिक विषमता के अतिरिक्त हमें यह भी स्पष्ट दिखाई दे रहा है कि हमारे सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन में भी विषमता व्याप्त है। विषमता के कारण राष्ट्रों में वर्ग भावना पैदा हो गई है। नये-नये अधिकारों के क्षेत्र सृजित हो रहे हैं और भेदभाव एवं पक्षधरता की भावना दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। इसी सामाजिक और राष्ट्रीय विषमता के कारण सारस्वत प्रदेश को संघर्ष झेलना पड़ा। उसी सारस्वत प्रदेश की विभुता और सुखद स्थिति के लिए श्रद्धा ने सामाजिक और राष्ट्रीय समरसता का प्रचार करने की बात कही है। श्रद्धा ने कहा है 'सब की समरसता का कर प्रचार, मेरे सुत सुन माँ की पुकार।'4 समरसता की इस वाणी ने सारस्वत प्रदेश में वर्ग भेद को समाप्त कर दिया और पूरा प्रदेश सुख शांति और समृद्धि से परिपूर्ण हो गया था। राष्ट्र में वसुधैव-कुटुम्बकम् की भावना जाग्रत हुई और इसी भावना को 'कामायनी' में महत्व दिया गया है। इतना ही नहीं, श्रद्धा सर्ग के अंतर्गत प्रसाद ने श्रद्धा द्वारा कर्म का जो प्रेरक संदेश दिलवाया है, उसे पढ़कर तो प्रसाद की कर्म विषयक धारणा और भी अधिक स्पष्ट हो जाती है-

डरो मत अरे अमृत संतान, अग्रसर है मंगलमय वृद्धि;
पूर्ण आकर्षण जीवन केन्द्र, खिंची आवेगी सकल समृद्धि
विश्व की दुर्बलता बल बने, पराजय का बढ़ता व्यापार

हँसाता रहे उसे सविलास, शक्ति का कीड़ामय संचार
शक्ति के विद्युतकण, जो व्यस्त विकल बिखरे हैं, जो निरूपाय;
समन्वय उनका करे समस्त विजयिनी मानवता हो जाये।5

नारी के संदर्भ से भी उन्होंने जो बातें कही हैं, वे उपेक्षणीय नहीं हैं। प्रसाद जिस आदर्श नारी को प्रस्तुत करने में सफल हुए हैं, वह भले ही आज की नारी का आदर्श न हो, किंतु वास्तविकता से किनारा तो नहीं किया जा सकता। वास्तव में प्रसाद या कोई भी कवि अपने युग की नारी को ध्यान में रखकर कोई कार्य नहीं करता है और न अपनी रचना में उसे कोई स्थान ही देता है। वह तो वही सोचता है जो शाश्वत होता है और लोक-कल्याणकारी होता है। श्रद्धा मंगल-कामना से युक्त है। आज की नारी यदि मंगल-कामना को महत्व नहीं दे पा रही है तो यह न नारी के हित में है और न समाज के हित में है।

प्रसाद ने 'कामायनी' में श्रद्धा को प्रमुखता से स्थान दिया है, किंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि मनु और इड़ा की उपेक्षा की गयी है। वास्तव में, मनु श्रद्धा और इड़ा तीनों ही ऐतिहासिक पात्र हैं। यह अतिरिक्त उपलब्धि है कि ये तीनों पात्र सांकेतिक अर्थ भी रखते है। श्रद्धा काव्य की नायिका है। इसमें कोई संदेह नहीं कि वह संपूर्ण काव्य में अधिक स्थान घेरे हुए है। एक प्रकार से 'कामायनी' की कथा यदि मनु से प्रारंभ होती है तो श्रद्धा के आगमन से ही उसमें गति आती है और अंततः वह श्रद्धा ही है जो कामायनीकार के उददे्श्य की वाहिका बनकर काव्य को अंतिम सोपानों तक ले जाती है। निस्संदेह प्रसाद अपने समूचे साहित्य में चाहे वह नाटक हो, उपन्यास हो या फिर काव्य हो कोई न कोई पात्र ऐसा रखते हैं जो उनके दृष्टिकोण का वाहक बनकर आया है। इस कृति में भी कामायनी अर्थात श्रद्धा प्रसाद के जीवन दर्शन की वाहिका बनकर आई है। ऐसा लगता है कि प्रसाद के जीवन विषयक निष्कर्ष अथवा चिंतन को श्रद्धा के माध्यम से स्पष्ट कर दिया गया है। श्रद्धा के व्यक्तित्व में प्रेम की शालीनता है, वह विश्वमंगल की व्यापक भावना से युक्त है, वह निराश नहीं है, एक अमर आस्था लिए हुए है। ममता, सहिष्णुता, त्याग, कभी न टूटने वाला उत्साह, कर्त्तव्यपरायणता और हृदय की सदाशयता एवं उच्चाशयता उसके व्यक्तित्व में पूंजीभूत हैं। प्रसाद ने उसके व्यक्तित्व का विश्लेषण करते हुए श्रद्धा सर्ग में ही कह दिया है-

दया, माया, ममता लो आज, मधुरिमा लो, अगाध विश्वास;
हमारा हृदय-रत्न निधि स्वच्छ तुम्हारे लिए खुला है पास।6

नारी का मातृत्व पक्ष श्रेष्ठ एवं पूज्यनीय माना जाता है। 'कामायनी' में नारी के कई रूप चित्रित हुए हैं। प्रत्येक रूप को 'कामायनी' की पृष्ठभूमि पर शत-प्रतिशत खरा उतारते हुए कामायनीकार प्रसाद जी नारी के रूप में चित्रित श्रद्धा के मातृत्व पक्ष को इन पंक्तियों में व्यक्त करते हुए कहते हैं-

झूले पर उसे झूलाऊँगी, दुलरा कर लूँगी बदन चूम,
मेरी छाती से लिपटा इस, घाटी में लेगा सहज घूम।
मेरी आँखों का सब पानी, तब बन जायेगा अमृत-स्निग्ध,
उन निर्विकार नयनों में जबदेखूँगी अपना चित्र मुग्ध!7

महाचिति सृष्टि का आदि तत्व है और इसी से वह परम, अद्‌वितीय एवं सर्वव्यापी सत्ता है।

ISSN 2320 – 0871
17 अक्टूबर 2015

उसका एकमात्र तत्व परमशिव है। चैतन्य, आनंद, इच्छा, ज्ञान तथा क्रिया ये पाँच उसकी प्रमुख शक्तियाँ हैं। शक्ति स्त्री स्वरूप है, इसी कारण उन्होंने महाचिति का विशेष उल्लेख किया है। शक्ति एवं शक्तिमान (शिव) की समरसता इसकी मूल आधार शिला है, न शिव शक्ति से विहीन है और न शक्ति शिव से विहीन है। दोनों एक साथ एकरूप होकर शाश्वत भाव से विद्यमान् हैं-

कर रही लीलामय आनन्द, महाचिति सजग हुई सी व्यक्त,
विश्व का उन्मीलन अभिराम, इसी में सब होते अनुरक्त।8

कामायनीकार प्रसाद द्वारा रचित श्रद्धा एक हृदयगत भाव है। हृदय-देश में ही आत्मा का निवास है। अतः श्रद्धा एक आत्मस्थानीय भाव है। श्रद्धा ही मनु मन को आत्म साक्षात्कार द्वारा अखण्ड आनंद की अनुभूति कराने में सफल होती है। नारी के विशाल और महिमामय स्वरूप का वर्णन कवि ने श्रद्धा के माध्यम से किया है। श्रद्धा मन की चेतना है और इसी के कारण ही मन में दया, माया, ममता आदि भाव जन्म लेते हैं। प्रसाद ने स्पष्ट रूप से नारी की वकालत की है। श्रद्धा के व्यक्तित्व के संदर्भ से यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि प्रसाद ने अपने हृदय की संपूर्ण भावनाओं को श्रद्धा को सौंप दिया है। उनकी मानवादर्श विषयक कल्पना श्रद्धा के रूप में ही व्यक्त हुई है। इसमें कोई संदेह नहीं कि श्रद्धा जैसा पात्र प्रसाद की अमर देन है। मनु की भाँति वह भी एक ऐतिहासिक चरित्र है। प्रसाद की धारणा के संदर्भ से कहा जाये तो कह सकते हैं कि श्रद्धा अपने ऐतिहासिक व्यक्तित्व में आर्यावर्त के प्रबुद्ध, तरूण आर्यसंघ के पूर्वज मानव की माँ है। उसका चरित्र वैदिक आर्यों की आनंदवादी संस्कृति का दर्पण है। प्रेम, विश्वास, कर्त्तव्य और त्याग उसके चरित्र के आदर्श बिंदु हैं। उसका जीवन कर्म-साधना के धरातल पर कार्यरत रहा है। पूरे काव्य में श्रद्धा कहीं भी अपने असाधारण व्यक्तित्व से स्खलित होती दिखाई नहीं देती है। श्रद्धा के जीवन का प्रमुख सिद्धांत-सूत्र था कि यह संसार कल्याण-भूमि है। उसकी धारणा यह भी है कि यह विश्व ब्रह्म का व्यक्त रूप है। अतः सत है असत् नहीं है। एक प्रकार से इस धारणा के माध्यम से प्रसाद ने उस भ्रामक धारणा का भी खण्डन कर दिया है। कि जगत असत्य है और जीवन क्षण भंगुर है। श्रद्धा इतनी संतुलित नारी है कि मनु को प्रत्येक स्थिति में समरस बने रहने का संदेश देती है। वह बार-बार यह कहती है कि अपने भीतर की चेतना को दूसरे की चेतना से मिला दो तो निश्चय ही जीवन समरस और आनंदमय हो जायेगा। 'कामायनी' के श्रद्धा, कर्म, ईर्ष्या, दर्शन और रहस्य सर्गों में उसके व्यक्तित्व का जो रूप आया है, उसे हम एक अविस्मरणीय पात्र का उदात्त चरित्र कह सकते हैं। यदि प्रतीक का सहारा लिया जाये तो श्रद्धा पराशक्ति का ऋतम्भरा प्रज्ञा के रूप में सामने आती है। वह शक्तिमती है, ज्ञान-चेतना से संपन्न है और ऐसी प्रेम भावना से युक्त है जो मंगलकारिणी होती है। श्रद्धा के गृहलक्ष्मी रूप का परिचय देता हुआ कवि 'ईर्ष्या' सर्ग में कहता है कि-

जब देखो बैठी वहीं, शालियाँ बीन कर नहीं श्रांत्!
या अन्न इक्ट्ठे करती है होती न तनिक सी कभी क्लांत,
चीजों का संग्रह और उधर चलती है तकली भरी गीत;
सब कुछ लेकर बैठी है वह, मेरा अस्तित्व हुआ अतीत!9

भावी संतान के लिए पुआलों की छाजन और कोमल लताओं की भित्तियों से उसने जो पर्णकुटीर बनाया है। उसमें वायु के आने के लिए वातायन बने हैं, वेतसी लता का सुरूचिपूर्ण झूला पड़ा है और धरातल पर सुमनों का कोमल सुरभि पूर्ण बिछ रहा है-

उस गुफा समीप पुआलों की, छाजन छोटी सी शांतिपुंज;
कोमल लतिकाओं की डालें, मिल सघन बनाती जहाँ कुञ्ज
ये वातायन भी कटे हुए प्राचीर पर्णमय रचित शुभ्र,
आवे क्षण भर तो चले बाँएं रूक जाए कहीं न समीर अभ्र।
उसमें था झूला पड़ा हुआ, बेतसी लता का सुरूचि पूर्ण,
बिछ रहा धरातल पर चिकना, सुमनों का कोमल सुरभि चूर्ण।10

श्रद्धा का यह गृह इतना सुंदर है कि मनु भी उसे देखकर चकित हो जाते हैं। उसकी मातृत्व-भावना और भावी संतान के स्वागत का उसके अंतरमन में जो उत्साह प्रकट हो रहा है उसे प्रसाद जी ने इस प्रकार से संजोया है कि कथा में किसी प्रकार की कृतिमता प्रतीत नहीं होती। श्रद्धा ने मनु को हर प्रकार से सहयोग दिया है। नारी की पद गरिमा को श्रद्धा पहचानती है तभी तो घायलावस्था में मनु के पास बैठकर गीत गाती है तो वह गीत अप्रासंगिक नहीं लगता है। ऐसा लगता है जैसे कोई सुलझी हुई नारी शक्ति सुख-दुख से ऊपर उठकर जीवन का मंत्र फूंक रही हो श्रद्धा केवल ऐसी पराशक्ति नहीं है जो जीवन की उपेक्षा करती हो, वह तो काम को व्यापक अर्थ में ग्रहण करती है। वह विश्व-चेतना से भी एकरूप है और पूर्णकाम की प्रतिमा भी है। काम की उपेक्षा संभव भी नहीं है, क्योंकि सृष्टि का आधार वही है, पर ध्यान रहे कि यह आधार काम का व्यापक अर्थ ग्रहण करने पर ही सही प्रमाणित होता है।

प्रसाद ने 'कामायनी' में काम-विषयक जो विचार प्रस्तुत किए हैं, वे विचार ही श्रद्धा के स्वरूप को समझने में सहायक हो सकते हैं। प्रसाद ने स्पष्ट स्वीकार किया है कि काम प्रेम का वैदिक रूप है और यह शब्द प्रेम की तुलना में अधिक व्यापक अर्थ रखता है। यदि प्रसाद की भावना को मानें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि यह विश्वजीवन काम का ही व्यापक रूप है। इससे यह निष्कर्ष भी उभरकर सामने आता है कि 'कामायनी' की काम-संस्तुति की कथा इसी विश्व-जीवन के व्यापक रूप की कथा है। प्रसाद इस कथा के द्वारा काम को विश्व-चेतना के रूप में प्रस्तुत करना चाहते थे। संभवतः इसी कारण उन्होंनें 'कामायनी' के अंतिम सर्ग में श्रद्धा को 'विश्व चेतना पुलकित, पूर्णकाम की प्रतिमा'11 कहा है। 'कामायनी' का 'काम' ही प्रसाद जी की कल्पना का बेजोड़ नमूना है। इसके द्वारा उन्होंने त्रिकाल को अद्भुत प्रकार से जोड़ा हैं। काम की पौराणिक मान्यता में उन्होंने कल्पना का ऐसा रासायनिक मिश्रण किया है कि उसका संयोजन और प्रयोजन ही बदल गया है। 'काम' पुराणों में सौंदर्य और प्रेम का देवता है, शिव में वासना-उद्दीप्त करने के प्रयास में भस्म होकर 'अनंग' यानी अमूर्त रूप में सर्वव्यापी हो गया। सांवेगिक स्तर पर वह मिलनतृषा और भौतिक स्वर पर स्थूल भोग-क्रिया है। दर्शन मे वह वर्जित है और अनेक दोषों का जन्म दाता है। अतृप्त आग है। पुराणों में रति उसकी पत्नी है। श्रद्धा काम गोत्रजा है। रीति युग में काम सेक्स क्रीड़ा का प्रतीक है। लेकिन 'कामायनी' में वह इन सबसे अलग है। जबकि

इन्हीं अवधारणाओं के संयोजन से रचा गया है। यहाँ वह सौभाग्यकांक्षिणी कन्या का पिता है। आकाशवाणी के माध्यम से वह कन्या के गुण-धर्म बताकर, वर को उसके योग्य बनने की सलाह देता है और एक तरह से माता-पिता की संस्था द्वारा विवाह को वैध बनाता है। (स्त्री-पुरुष के संयोग में काम की उपस्थिति कितनी सांकेतिक और प्रयोजनीय है) 'कामायनी' की दार्शनिक दृष्टि में वह मंगल मण्डित श्रेय है। "जब मनु श्रद्धा को छोड़कर सारस्वत प्रदेश के प्रांतर में भटक रहा होता है तो पुनः पिता और द्रष्टा की हैसियत से काम उसे लताड़ता है और अतीत तथा वर्तमान का साक्षी होने के कारण देव-दानव द्वंद्व का इतिहास बताते हुए मानव-सभ्यता में उसकी आवृति के द्वारा उसे अतीत से उठाकर वर्तमान के पटल पर रख देता है । पिता के नाते वह श्रद्धा के मन और जीवन की सात्त्विकता बखानते हुए मनु के अधूरे स्वीकार और उसकी नारी-विषयक दृष्टि के कारण मानवीय भविष्य को अभिशप्त करता है। काम के फलक को विस्तृत करते हुए उसमें अनेक संभव लेकिन प्रायः अपूर्व आयामों को सामाहित करते हुए प्रसाद ने इसे विलक्षण बना दिया है।"12

कामायनीकार प्रसाद को श्रद्धा के नील घनशावक से सुकुमार घुँघराले बाल तथा आँसू की नायिका के मणिधर सर्प से लंबे लहराते केश मंत्रमुग्ध बनाते हैं तो कहीं यह बिखरी अलकें ही उलझन और तर्कजाल बन जाती हैं। कवि को इतने से ही संतोष नहीं होता, केशों की सुगंध का परिचय देने के लिए उसने 'लहर' की नायिका को अलकों में मलयज बंद करके सुला दिया है, तथा 'स्कंदगुप्त' में अगरूधूम की श्याम लहरियाँ इन अलकों से उलझा कर सौरभ को पावनता भी प्रदान की है। पलकों का सौंदर्य प्रसाद ने मंदिर भार से झुकने में प्रकट किया है। कपोल की सुंदरता को मधूक रसेकपोल कहकर उनकी अरूणिमा को ज्वालामुखी का सादृश्य देकर व्यक्त किया है। नासिका के सौंदर्य के अंतर्गत प्रसाद जी ने सुढरनासा, नुकीली नोंक तथा पतले पुटफ की ओर संकेत किया है। कानों के लिए प्रसाद जी ने कमल के पत्तों का लाल उपमान प्रस्तुत किया है। अधरों को सीधे-सीधे लाल न कहकर श्रद्धा की मुस्कान को रक्त किसलय पर विश्राम लेने वाली सूर्य की अम्लान किरण कहा है। संपूर्ण मुख के सौंदर्य को प्रसाद ने अरूण रवि मंडल सा दीप्त कह कर श्रद्धा के तेजोमय स्वरूप को सामने रखा है। श्रद्धा के कपोलों को कवि ने किसी विशेष संबोधन से तो अभिहित नहीं किया किंतु कपोलों की लालिमा को ज्वालामुखी की संज्ञा अवश्य ही है-

या कि, नव इन्द्र-नील लघु -श्रृंग, फोड़कर धधक रही हो कांत,
एक लघु ज्वालामुखी अचेत, माधवी रजनी में अश्राँत।13

नीली पहाड़ी को फोड़कर कैसे ज्वालामुखी धधकती है और मधुर रात्रि में भी शांत नहीं होती। उसी प्रकार श्रद्धा के कपोलों की धधकती लालिमा मुख के चारों ओर फैली नीली अलकों को भेदकर प्रज्जवलित है। दिन और रात इसमें कोई व्यवधान प्रस्तुत नहीं करते। नुकीली व ढलावदार नासिका मुख की शोभा देती है। ऊँची नाक की कहावत भी अति सामान्य है। 'कामायनी' में श्रृंगार की विशेष मनः स्थिति में कवि ने नासिका की नोक और पतले पुटफ की ओर भी दृष्टिपात किया है-

गिर रही पलकें झुकी थी नासिका की नोक,
भ्रू लता थी कान तक चढ़ती रही बेरोक।
नासिका नुकीली के पतले पुटफ रहे कर स्मित अमोल।14

शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2320 – 0871
17 अक्टूबर 2015
पीअर रीव्यूड रेफ़्रीड रिसर्च जर्नल

मिलनावस्था में लज्जा से पाठकों के साथ ही नासिका की नोक भी झुक जाती है। क्योंकि समर्पण की बेला मे झुकना ही तो सार्थकता है। नायिका जब हंसती है तो नाक के पतले पुटक भी कुछ-कुछ लाल हो जाते है मानों वह भी स्मित का अनमोल खजाना लुटा रहे हों। प्रसाद जी ने अधरों का सौंदर्य केवल उनकी रक्तिम अरूणिमा में ही नहीं माना प्रत्युत उनकी दृष्टि में वहीं सुंदर हैं जिनमें मुस्कान इठलाती हो, अमंद राग विहँसते हों। इन्हीं भावों को उन्होंने 'कामायनी' में व्यक्त किया है। 'कामायनी' में श्रद्धा की मुस्कान अधरों के दो रक्तिम किसलयों पर विश्राम ले रही है मानों सूर्य की कोई अम्लान किरण ही अलसा कर अँगड़ाई ले रही हो-

और उस मुख पर वह मुस्कान, रक्त किसलय पर ले विश्राम
अरूण की एक किरण अम्लान, अधिक अलसाई हो अभिराम।15

इस अधरों की हँसी का प्रतिबिंब भी बड़ा ही मधुर और मद विह्वल है-

हँसी का मद विहवल प्रतिबिंब, मधुरिमा खेला सदृशअबाध।16

मुख का सौंदर्य और आकर्षण नायिका के व्यक्तित्व में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। 'कामायनी' में श्रद्धा के मुख के तेजोमय रूप को कवि प्रसाद ने प्राकृतिक उपमान द्वारा व्यक्त किया है-

आह! वह मुख! पश्चिम के व्योम-बीच जब घिरते हों घनश्याम
अरूण रविमंडल उनको भेद, दिखाई देता हो छविधाम।17

पश्चिम के आकाश में जब बादल छाए हों और उनके बीच से रूप यौवन की अरूणिमा से दीप्त सूर्य प्रकट होकर जिस प्रकार सारे संसार को प्रकाशित कर देता है उसी तरह श्रद्धा के घने घुँघराले बालों के बीच से तेजोमय मुख प्रकाश किरणें बिखेरता हुआ सा प्रतीत होता है। इसके अतिरिक्त कवि प्रसाद ने मुख को बिजली का फूल भी कहा है-

खिला हो ज्यों बिजली का फूल मेघ बन बीच गुलाबी रंग।18

'कामायनी' में एक ओर श्रद्धा के मुख को अरूण रवि मंडल के उपमान द्वारा कवि ने दीप्ति प्रदान की है तो दूसरी ओर इड़ा का मुख फूल की तरह खिला है। जिसमें भ्रमरों की गुनगुनाहट सदृश गान भरे हुए है। वहीं श्रद्धा के उन्नत वक्ष जो खुले भुज-मूलों से नायक मनु को आलिंगन का आमंत्रण देते हुए से प्रतीत होते हैं-

खुले मसृण भुज-मूलो से, वह आमंत्रण था मिलता,
उन्नत वक्षों में आलिंगन, सुख लहरों सा तिरता।19

श्रद्धा की पत्तों सी कमनीय हथेली को वायु के स्पर्श मात्र से कंपित और पसीने से तर कहकर नारी के आंतरिक भावों का चित्रण भी शरीर के माध्यम से व्यक्त किया है-

जलदागम मारूत से कम्पित, पल्लव सदृश हथेली,
श्रद्धा की धीरे से मनु ने, अपने कर में लेली।20

तन और मन की सुंदर नारी की लम्बी काया उसके व्यक्तित्व की विशालता की परिचायक होती है। यही कारण है कि 'कामायानी' की श्रद्धा की उन्मुक्त लंबी काया पर सर्वप्रथम मनु की दृष्टि पड़ती है-

हृदय की अनुकृति बाह्य उदार, एक लम्बी काया, उन्मुक्त;
मधु पवन क्रीडित ज्यों शिशु साल, सुशोभित हो सौरभ संयुक्त।21

श्रद्धा छोटे साल के वृक्ष की सी लंबी है और साथ ही सौरभ से भी परिपूर्ण है। कवि को तो ऐसा

प्रतीत होने लगता है मानों फूल के आँचल में मधु का आधार लेकर पराग निर्मित शरीर साक्षात सौरभ के रूप में ही पृथ्वी पर साकार हो उठा है-

रचित परमाणु पराग शरीर, खड़ा हो ले मधु का आधार।22

छायावादी कवि प्रसाद ने पूर्वकालीन कवियों की भाँति नख से शिख तक क्रमानुसार नारी के एक-एक अंग को लेकर उसका चित्रण नहीं किया प्रत्युत प्रसंगवश स्वाभाविक रूप से जिस अंग के प्रति भाव हृदय से उद्‌घाटित हुआ, उसे ज्यों का त्यों छंद में बाँध दिया। यही कारण है कि इन कवियों के पूरे काव्य में विभिन्न अंगों के स्वतंत्र सौंदर्य चित्र बिखरे मिलते हैं परंतु पूरा नखशिख वर्णन एक ही स्थान पर दुर्लभ है। एक ही छंद में कुछ अंगों को लेकर नारी के व्यक्तित्व के समष्टि प्रभाव की अभिव्यक्ति की गई है अतएव ऐसे स्थलों पर कवि का दृष्टिकोण नारी के संपूर्ण व्यक्तित्व की भावना को आकार देता अधिक प्रतीत होता है। अंग विशेषों के सौंदर्य चित्र देना कम। नारी सौंदर्य के प्रभाव के चित्रों की उपेक्षा करना अन्याय होगा।

प्रसाद जी ने 'कामायनी' में वासना सर्ग के अंर्तगत श्रद्धा की समर्पण बेला का चित्र उसके कुछ अंगों की भाव भंगिमा द्‌वारा बडे ही मनोहारी रूप में उतारा है-

गिर रहीं पलकें, झुकी थी नासिका की नांेक,
भ्रूलता थी कान तक चढ़ती रही बेरोक,
स्पर्श करने लगी लज्जा ललित कर्ण कपोल,
खिला पुलक कदंब-सा था भरा गद्‌गद बोल!23

सौंदर्य आकर्षण तथा ओज से अनुप्राणित संपूर्ण व्यक्तित्व की वह समष्टि है जो उसके बाह्य तथा आंतरिक स्वरूप को समेटकर स्वयं स्थूल और सूक्ष्म पक्ष की दो कोटियों में विभक्त हो जाता है। छायावादी कवि प्रसाद ने उक्त दोनों पक्षों के समंवय में ही सौंदर्य की पूर्णता मानी है। यही कारण है कि सभी के काव्य में देह द्‌युति एवं अनुपम नारी सौंदर्य छवि के चित्र यत्र-तत्र व्याप्त हैं। प्रसाद जी की 'कामायनी' श्रद्धा नित्य यौवन छवि से दीप्त है-

नित्य यौवन छवि से हो दीप्त, विश्व की करूण कामना मूर्ति;
स्पर्श के आकर्षण से पूर्ण, प्रकट करती ज्यों जड़ में स्फूर्ति।24

प्रसाद की 'कामायनी' आंतरिक और बाह्य सौंदर्य के विभिन्न पक्षों को लेकर सिद्ध हुई है। 'कामायनी' की श्रद्धा एक ओर पतझड़ में उष्णता में शीतलता की मंद बयार है तो दूसरी ओर उसमें करूणा एवं वेदना भी है तभी वह मनु की ही नहीं प्रत्युत जड़ धरती की वेदना का भी अनुभव करती है-

दृष्टि जब जाती हिम-गिरि ओर, प्रश्न करता मन अधिक अधीर
धरा की यह सिकुड़न भयभीत, आह कैसी है? क्या है पीर।25

परिधान सौंदर्य का एक महत्वपूर्ण उपकरण है। व्यक्तित्व की परिष्कृति एवं सुरूचि से इसका विशेष संबंध है। कवि प्रसाद ने केवल भव्य एवं राजकीय परिधान से ही अपनी नायिकाओं को अलंकृत नहीं किया, प्रत्युत भव्य और सामान्य दोनों ही प्रकार की वेशभूषा यथास्थान यथा अवसर आई है। 'कामायनी' में श्रद्धा के प्रसंग में मसृण गांधार देश के नील रोम वाले मेषों के चर्म कहकर कवि ने प्राकृतिक वातावरण में प्रकृतिनुकूल उपमान का आश्रय लिया है-

मसृण गांधार देश के नील, रोम वाले मेषों के चर्म
ढँक रहे थे उसका वपु कांत, बन रहा था वह कोमल वर्म।26

अन्य कई स्थानों पर भी इस प्रकार के परिस्थिति समय आदि के अनुकूल परिधान प्रसाद जी की नारी सौंदर्य भावना को अद्‌वितीय बना देते हैं। वस्त्र एवं आभूषणों का वर्ण भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है और उससे नारी सौंदर्य को सजीवता एवं परिपूर्णता प्राप्त होती है। कवि प्रसाद का नील वर्ण के प्रति विशेष लगाव सा लगता है तभी वह आदि नारी श्रद्धा के परिधान का वर्ण भी नीला ही चुनते हैं-

नील परिधान बीच सुकुमार, खुल रहा मृदुल अधखुला अंग,
खिला हो ज्यों बिजली का फूल, मेघ बन बीच गुलाबी रंग।27

यहाँ नील परिधान के साथ ही साथ बिजली के स्वर्णोज्जवल गुलाबी वर्ण का भी उल्लेख कर कवि ने सौंदर्य को अनिवर्चनीयता प्रदान की है। तेजोमय मुख के सौंदर्य को ज्वालामुखी और अलकों को नील श्रृंग के समान कहकर भी कवि ने वर्ण की स्वाभाविकता को स्पष्ट किया है।

श्रद्धा के रूप-सौंदर्य में कोमलता, आकर्षण, लावण्य तो है ही साथ ही प्रसाद ने उसके रूप-सौंदर्य वर्णन में दार्शनिकता का सहारा लिया है। दूसरों को सुखी बनाने का भाव श्रद्धा में इतना प्रबल है कि अपने ही दुःख के बोझ से मनुष्य को दबते देख वह उनका सहचर बनने का प्रस्ताव करती है, और अपना जीवन उनके पद तल में निर्विकार भाव से उत्सर्ग करने को प्रस्तुत हो जाती है-

समर्पण लो सेवा का सार, सजल संतृति का यह पतवार,
आज से यह जीवन उत्सर्ग इसी पद तल में विगत विकार।28

दया, माया, ममता, मधुरिमा अगाध विश्वास आदि श्रद्धा के हृदय के अन्य रत्न है, जिन्हें वह मनु को समर्पित करके उनको सुख प्रदान करना चाहती है। श्रद्धा मनु की अर्धांगिनी है, इस रूप में वह सदैव छाया की भाँति मनु के साथ रहना चाहती है। परिस्थितिवश जब उसकी स्थूल देह मनु से अलग हो जाती है, तब भी उसका मन सदैव मनु का ही चिंतन करता रहता है। कष्ट और आनंद दोनों ही दशाओं में वह पत्नी के समान ही मनु का साथ देती है।

श्रद्धा नारी के कल्याणमयी रूप का प्रथम दर्शन 'श्रद्धा सर्ग' में ही प्रकट हो जाता है। जब वह खिन्न और हताश मनु को प्रकृति-वैभव के उपभोग के लिए प्रोत्साहित करती और स्वयं को भी मनु के समक्ष प्रस्तुत करती हुई कहती है-

एक तुम, यह विस्तृत भू खंड, प्रकृति वैभव से भरा अमंद,
कर्म का भोग, भोग का कर्म, यही जड़ का चेतन आनंद।29

पथ प्रदर्शिका बनने के उपयुक्त वही नारी होती है, जिसे पथ का समुचित ज्ञान हो, श्रद्धा की इस योग्यता का पता श्रद्धा सर्ग में ही लग जाता है। श्रद्धा को विश्वास है कि दुःख की रजनी के पश्चात् सुख आता है। प्राणी सृष्टि की जिन दुखद घटनाओं को अभिप्राय समझता है वस्तुतः वह ईश का रहस्य वरदान है-

जिसे तुम समझे हो अभिशाप, जगत की ज्वालाओं का मूल
ईश का वह रहस्य वरदान, कभी मत जाओं इसको भूल।30

मानवता की विजय के लिए भी श्रद्धा पूर्णतया आश्वस्त है, हाँ लेकिन इसके लिए प्राणी को शक्ति के बिखरे हुए समस्त कणों को समन्वित करना होगा-

शक्ति के विद्‌युत्कण, जो व्यस्त, विकल बिखरे हैं, हो निरूपाय,

समन्वय उसका करे समस्त, विजयिनी मानवता हो जाय।31

'दर्शन' सर्ग में भी श्रद्धा ने विषमता के विष को कर्मोंन्नति से सम बना देने और संयमित जीवन-यापन में ही मानव की उन्नति का रहस्य बताया है। 'रहस्य' सर्ग में भी श्रद्धा के दिव्य दर्शन, मनु की पथ प्रदर्शिका के रूप में ही होते हैं। इच्छा, कर्म और ज्ञान लोक का वर्णन श्रद्धा ने जिन शब्दों में किया है, उनसे उसकी बहुज्ञता का परिचय मिलता है। इस पथ-प्रदर्शिका की स्थिति में इतनी शक्ति है कि वह ज्योति-रेखा सी बन कर उन तीनों लोकों को संबद्ध कर देती है। 'आनंद' सर्ग में प्रसाद जी ने श्रद्धा का परिचय निम्नलिखित पंक्तियों में स्वयं श्रद्धामय होकर दिया है-

वह कामायनी जगत की, मंगल कामना अकेली थी
ज्योतिष्मती प्रफुल्लित मानस तट की वन बेली!
वह विश्व चेतना पुलकित थी पूर्ण काम की प्रतिमा
जैसे गंभीर महाह्रद हो भरा विमल जल महिमा।32

कामायनीकार प्रसाद जी ने श्रद्धा का जीवन एक ऋषिका तुल्य दिखाया है। सात्विकता और अहिंसा में श्रद्धा की पूर्ण रूपेण आस्था है। अपने एक मात्र सहचर 'मनु' से भी वह अहिंसा की रक्षा के लिए रूठ जाती है और उसके सम्मुख अहिंसा का महत्व प्रतिष्ठित करती हुई जीव दया और प्रेम की साक्षात मूर्ति सदृश दिखाई पड़ती है-

ये प्राणी जो बचे हुए हैं, इस अचला जगती के,
उनके कुछ अधिकार नहीं, क्या वे सब ही हैं फीके!33

प्राकृतिक जीवन से उसे लगाव है। मनु की एकांत तपस्या से वह भले ही सहमत न हो, तप की अति में वह भले ही विश्वास न करती हो, किंतु तप और साधना में वह मनु से किसी भी प्रकार पीछे नहीं। काम की संतान होने से श्रद्धा का देवत्व सहज सिद्ध होता है, किंतु इसके अतिरिक्त भी उसकी अनेक उदात्त विशेषताएं उसके देवत्व की पुष्टि करती हैं। मनु को आनंद लोक में पंहुचाकर वही उन्हें देवतुल्य बनाती है। यही उसका नारी आदर्श है। उसकी देवोचित तेजस्विता से असुर भी भय खाते हैं-

आकुलि ने तब कहा, देखते नहीं साथ में उसके;
एक मृदुलता की, ममता की छाया रहती हँस के।
अंधकार को दूर भगाती, वह आलोक किरन सी;
मेरी माया बिंध जाती है, जिससे हलके घन सी।34

प्रसाद जी ने रूप सौंदर्य के मनोहारी भावपूर्ण चित्रणों के मध्य आकर्षण मुद्राओं की भी कल्पना की है। प्रसाद नारी को रहस्यमयी भुवन मोहिनी के रूप में देखते हैं। इस बात में कोई संदेह नहीं कि इस रहस्यपूर्णता में मनुष्य को अधिकृत कर लेने का प्रबल आकर्षण है। प्रसाद जी की प्रेयसी में कल्पना, प्रेम और कला तीनों का अपूर्व समंवय है। 'कामायनी' की श्रद्धा कवि प्रसाद की आदर्श कल्पना की विशुद्ध प्रतिकृति है।

निस्संदेह 'कामायनी' एक विशिष्ट कालजयी काव्य कृति है इसके मूल में तो एक ही स्रोत है परंतु उससे कई धाराएं निकलती है जो 'कामायनी' रूपी इस जीवन काव्य की महत्वपूर्ण घटनाएं हैं। हमारी दृष्टि में स्वार्थ प्रेरित अहंकार का नाश, स्त्री और पुरुष का पारस्परिक मिलन, नारी द्वारा सर्वस्व समर्पण, स्त्री और पुरुष के प्रणय-संसर्ग से सृष्टि का विकास, पुरुष की अनियंत्रित अधिकार भावना और अधिकार क्षेत्र का प्रसार करने की कामना, कुण्ठा, बुद्धि और अतिचार पर उद्दाम प्रयत्न और उसके परिणामस्वरूप मानव चेतना

की पूरी तरह विफलता और इस विफलता के मूल कारण की पहचान और अंततः सामंजस्य के द्वारा आनंद की प्राप्ति आदि महत्वपूर्ण घटनाएँ हैं जो कवि प्रसाद को आज के दौर में भी प्रासंगिक बनाती है।

निष्कर्ष

कामायनीकार प्रसाद सच्चे अर्थों में ईश्वर का प्रसाद थे। उन्होंने 'कामायनी' जैसी कालजयी कृति साहित्य जगत को तो दी ही साथ ही उनकी आरंभिक रचनाओं में 'झरना', 'आँसू', 'लहर' एवं 'प्रेम पथिक' की अपनी एक विशिष्ट पहचान है। 'कामायनी' जो एक जीवन काव्य है उसको विस्तृत एवं सुदृढ़ आधार प्रसाद की आरंभिक कृतियों ने ही दिया।

'कामायनी' में श्रद्धा, मनु और इड़ा के माध्यम से कवि प्रसाद एक अपूर्व काव्य सृष्टि को जन्म देते हैं। श्रद्धा 'कामायनी' की मुख्य नारी पात्र है। वह जिस सभ्यता का आरंभ करती है उसमें मानव सभ्यता, दया, ममता, मधुरिमा, विश्वास, समपर्ण, सेवा, जीवन, उत्सर्ग आदि प्रमुख हैं। प्रसाद जी श्रद्धा के माध्यम से कहते हैं कि जीवन के आरोह-अवरोह में जब नैसर्गिक रूप श्रद्धा भाव का अविर्भाव होगा तभी वह मानव जीवन का मूल्य बनेगा।

निस्संदेह कहा जा सकता है कि नारी और पुरुष के सौंदर्य-निरूपण में प्रसाद जी का जो दृष्टिकोण व्यक्त हुआ है, वह उनकी दिव्यता, गरिमा, पावनता, उज्जवलता और सांस्कृतिक बोध का परिणाम है। भारतीय संस्कृति के उपासक, मानवता के पक्षधर और अतिरिक्त बुद्धि-प्रयोग के विशेष होने के कारण प्रसाद जी का सौंदर्य बोध अपना प्रतिमान आप बनकर आया है।

संदर्भ ग्रंथ

1. *छायावाद; पृ. 58*
2. *पंत प्रसाद और मैथिलीशरण; पृ. 48*
3. *प्रसाद ग्रंथावली भाग-4; इड़ा सर्ग, पृ572*
4. *वही; दर्शन सर्ग, पृ654*
5. *प्रसाद ग्रंथावली भाग-4; श्रद्धा सर्ग, पृ. 468-469*
6. *श्रद्धा सर्ग; पृ. 467*
7. *ईर्ष्या सर्ग; पृ. 562*
8. *श्रद्धा सर्ग; पृ. 463*
9. *ईर्ष्या सर्ग; पृ. 551*
10. *ईर्ष्या सर्ग; पृ. 559*
11. *वही; आनंद सर्ग, पृ. 700*
12. *जयशंकर प्रसाद की प्रासंगिकता; पृ. 78*
13. *प्रसाद ग्रंथावली भाग-4; श्रद्धा सर्ग, पृ. 457*
14. *वही; वासना सर्ग, पृ. 504 (इड़ा सर्ग - पृ. 579)*
15. *वही; श्रद्धा सर्ग, पृ. 457*
16. *वही; श्रद्धा सर्ग, पृ. 458*
17. *वही; श्रद्धा सर्ग, पृ. 456*
18. *वही; श्रद्धा सर्ग, पृ. 456*
19. *वही; कर्म सर्ग, पृ. 535*
20. *वही; कर्म सर्ग, पृ. 537*
21. *वही; श्रद्धा सर्ग, पृ. 456*
22. *वही; श्रद्धा सर्ग, पृ. 458*
23. *वही; वासना सर्ग, पृ. 504*
24. *वही; श्रद्धा सर्ग, पृ. 457*
25. *वही; श्रद्धा सर्ग, पृ. 461*
26. *वही; श्रद्धा सर्ग, पृ. 456*
27. *वही; श्रद्धा सर्ग, पृ. 456*
28. *वही; श्रद्धा सर्ग, पृ. 467*
29. *वही; श्रद्धा सर्ग, पृ. 466*
30. *वही; श्रद्धा सर्ग, पृ. 463*
31. *वही; श्रद्धा सर्ग, पृ. 469*
32. *वही; आनंद सर्ग, पृ. 700*
33. *वही; कर्म सर्ग, पृ. 539*
34. *वही; कर्म सर्ग, पृ. 522*

सहायक ग्रंथ-

1. अग्रवाल; डॉ पुरुषोत्तम दास, ध्रुवस्वामिनी का शास्त्रीय विवेचन, जीवन ज्योति प्रकाशन, 3014, बल्ली मारान, दिल्ली-6, संस्करण, 1974
2. कृष्णन; डॉ. सर्वेपल्लि राधा, धर्म और समाज, राजपाल एण्ड संज, कश्मीरी गेट, दिल्ली
3. गर्ग; प्रतिभा, छायावादी कवियों की नारी भावना; प्रकाशक-जवाहर पुस्तकालय, सदर बाजार मथुरा, 1987
4. गुप्त; मैथिलीशरण, साकेत, संस्करण, 1956, प्रसाद प्रकाशन गोवर्द्धन सराय, वाराणसी
5. चतुर्वेदी; जगदीश्वर, सुधा सिंह, स्त्री अस्मिता साहित्य और विचारधारा, आनन्द प्रकाशन, कोलकाता प्रथम संस्करण 2004
6. चतुर्वेदी; डॉ.शंभूनाथ, आधुनिक कविता की यात्रा, सुलभ प्रकाशन, 17 अशोक मार्ग, लखनऊ, 1983
7. चातक; डॉ.गोविन्द, प्रसाद के नाटक: स्वरूप और संरचना, तक्षशिला प्रकाशन, 23/4762, अन्सारी रोड, दरियागंज
8. जायसी; मलिक मुहम्मद, जायसी ग्रंथावली, संपादक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, पंचत संस्करण, संवत् 2008
9. जोशी; शांति, सुमित्रानंदन पंत-जीवन और साहित्य, खण्ड एक, प्रथम संस्करण, 1970, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
10. जोशी; शांति, सुमित्रानंदन पंत-ग्रंथावली (खंड-एक); द्वितीय संस्करण, 1980; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
11. जोशी; शांति, सुमित्रानंदन पंत-ग्रंथावली (खंड-दो); द्वितीय संस्करण, 1980; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
12. जोशी; शांति, सुमित्रानंदन पंत-ग्रंथावली (खंड-तीन); द्वितीय संस्करण, 1980; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
13. जोशी; शांति, सुमित्रानंदन पंत-ग्रंथावली (खंड-चार); द्वितीय संस्करण, 1980; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
14. जोशी; शांति, सुमित्रानंदन पंत-ग्रंथावली (खंड-पाँच); द्वितीय संस्करण, 1980; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
15. जोशी; शांति, सुमित्रानंदन पंत-ग्रंथावली (खंड-छह); द्वितीय संस्करण, 1980; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
16. जोशी; शांति, सुमित्रानंदन पंत-ग्रंथावली (खंड-सात); द्वितीय संस्करण, 1980; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
17. तनेजा; डॉ. सत्येन्द्र, हिंदी नाटक पुनर्मूल्यांकन, ग्रन्थम प्रकाशक, रामबाग, कानपुर-12
18. तुलसीदास-रामचरित मानस; गीता प्रेस, गोरखपुर, अष्टम बार, संवत् 2012
19. तिवारी; डॉ. ललित मोहन, सुमित्रानन्दन पंत का गद्य साहित्य, ज्ञानोदय प्रकाशन, सुमित्रा सदन, मल्लीताल, नैनीताल, प्रथम संस्करण, 1995
20. तिवारी; डॉ. रामचन्द, हिंदी का गद्य-साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, के 40/6 भैरवनाथ, वाराणसी-1
21. दुआ; श्रीमती सरला-आधुनिक हिंदी साहित्य में नारी, साहित्य निकेतन कानपुर
22. दुधनीकर; डॉ. एम.एस, प्रसाद साहित्य का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन, अलका प्रकाशन, किदर्व नगर, कानपुर, 205011
23. दिनकर; रामधारी सिंह-उर्वशी, चक्रवाल प्रकाशन, पटना-4, द्वितीय संस्करण, सन् 1964
24. दीक्षित; डॉ. सूर्यप्रसाद, प्रसाद साहित्य की अंतः चेतना, कलमघर प्रकाशन, जोधपुर, प्रथम संस्करण, 1973
25.(डॉ.) नगेन्द्र; सुमित्रानंदन पंत, नवम संस्करण, सं0 2016, साहित्य रत्न भंडार, आगरा
26. पालीवाल; कृष्णदत्त, हिंदी आलोचना का सैद्धान्तिक आधार, वाणी प्रकाशन, 21-ए, दरियागंज नई दिल्ली-2
27. पाठक; डॉ. मानवेन्द्र, प्रसाद-काव्य में ध्वनि तत्व, ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1990
28. (डॉ.) पाण्डेय; उषा- मध्ययुगीन हिंदी साहित्य में नारी भावना, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली
29. पाण्डेय; गंगा प्रसाद, छायावाद के आधार स्तम्भ, लिपि प्रकाशन, ई 5/20 कृष्णानगर, दिल्ली-51, प्रथम संस्करण, 1971
30. पाण्डेय; सुधाकर, आधुनिक हिंदी साहित्य मूल्य और मान्यताएं, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-1979
31. पिल्लै; एन.पी.- पंत छायावादी व्यक्तित्व और कृतित्व, प्रथम संस्करण, 1970, जयप्रकाश, लिंगम पल्ली, हैदराबाद-27
32. पिल्लै; कुट्टन- पंत काव्य में बिंब योजना, हिंदी बुक सेन्टर, नई दिल्ली

33. प्रेमशंकर; कामायनी का रचना संसार, भारती भंडार, लीडर प्रेस इलाहाबाद, 1977 ई0

34.प्रेमशंकर; प्रसाद का काव्य, राधाकृष्ण प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली 1994

35. प्रसाद; जयशंकर- कामायनी, चतुर्थ संस्करण, 1978, प्रसाद प्रकाशन गोवर्द्धन सराय, वाराणसी

36. प्रसाद; रत्नशंकर, डॉ. गिरीश चन्द्र त्रिपाठी, प्रसाद के नाम पत्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1976

37. भटनागर; डॉ. सुषमा, नयी कविता में प्रेम-सम्बन्ध, प्रेम प्रकाशन मंदिर, दिल्ली-6

38. मदान; इन्द्रनाथ, जयशंकर प्रसाद, चिंतन व कला, हिंदी भवन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 1956

39. मल्होत्रा; डॉ. सुषमा पाल, प्रसाद के नाटक तथा रंगमंच, राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली

40. मालती; डॉ. के.एम., स्त्री विमर्श: भारतीय परिप्रेक्ष्य, वाणी प्रकाशन, 4695, 21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली

41. मिश्र; डॉ. सत्यप्रकाश, जयशंकर प्रसाद ग्रंथावली, भाग-1, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद-1, सं0 2010

42. वही; भाग-2, वही

43. वही; भाग-3, वही

44. वही; भाग-4, वही

45. बिष्ट; डॉ. शेर सिंह, सुमित्रानंदन पंत के साहित्य का ध्वनिवादी अध्ययन, ग्रंथायन, सर्वोदय नगर, सासनी गेट, अलीगढ़

46. वही; उत्तरांचल: भाषा एवं साहित्य का संदर्भ, इण्डियन पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली, संस्करण-2004

47. सक्सेना; डॉ. द्वारिका प्रसाद, आँसू-भाष्य, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, प्रथम संस्करण, 1971

48. वही; कामायनी-भाष्य, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा-2, प्रथम संस्करण, 2009

49. वही; प्रसाद-दर्शन, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा, प्रथम संस्करण 1969

50. वही; हिन्दी के श्रेष्ठ उपन्यास और उपन्यासकार, विश्वभारती पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली-2

51. सक्सेना; डॉ. सुनीता, महिला उपन्यासकारों की सामाजिक चेतना, आशा पब्लिशिंग कम्पनी, आगरा-282004, प्रथम संस्करण 2004

52. सिंह; डॉ. दशरथ, स्वचछंदतावादी नाटककार जयशंकर प्रसाद, सन्मार्ग प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली

53. सिंह; नामवर, छायावाद, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1955

54. सिंह; डॉ. रामकुमार, आँसू भाष्य, साहित्य रत्नालय, गिलिश बाजार, कानपुर-208012

55. शतपथी; डॉ. अर्जुन, मधुसूदन साहा, जयशंकर प्रसाद परिप्रेक्ष्य एवं परिदृश्य, पराग प्रकाशन, 3/114, कर्ण गली, विश्वासनगर, शाहदरा, दिल्ली-32, प्रथम संस्करण 1989

56. शर्मा; डॉ. हरिचरण, कामायनी विमर्श, मलिक एण्ड कम्पनी, जयपुर, दिल्ली; प्रथम संस्करण 2005

57. शर्मा; डॉ. कृष्णदेव, प्रसाद के चार काव्य, रीगल बुक डिपो, दिल्ली-6

58. शर्मा; डॉ. श्रीपति, हिन्दी नाटकों पर पाश्चात्य प्रभाव, विनोद पुस्तक मन्दिर, हास्पिटल रोड, आगरा

59. शारदा; कृष्ण- आधुनिक हिन्दी काव्य पर अरविंद-दर्शन का प्रभाव, प्रकाशक-नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, प्रथम संस्करण, संवत- 2029 वि.

60. शाह; रमेश चन्द्र, छायावाद की प्रासंगिकता, प्रथम संस्करण, 1973 राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली

61. शुक्ल; आ. रामचन्द्र-हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

62. (डा.) क्षेम चन्द्र-नारी; तेरे रूप अनेक, हिंदी साहित्य संसार, दिल्ली

63. श्रोत्रिय; प्रभाकर, जयशंकर प्रसाद की प्रासंगिकता, भारतीय ज्ञानपीठ, लोदी रोड, नयी दिल्ली-3, द्वितीय संस्करण 2004